शोध मंथन Vol. XVI No.I Jan.- Mar. 2025 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 8.877 (SJIF)

प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा : गौरवशाली अतीत के विविध आयाम

प्राप्तिः 20.02.2025
स्वीकृतः 18.03.2025

2

हितेन्द्र यादव
एसोसिएट प्रोफेसर, (इतिहास विभाग)
लाजपत राय कॉलेज,
साहिबाबाद, गाजियाबाद
ईमेलः dr.hitendra2011@gmail.com

सारांश

प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा अद्वितीय ज्ञान एवं प्रज्ञा का प्रतीक है। जिसमें ज्ञान और विज्ञान, लौकिक और पारलौकिक, कर्म और धर्म तथा भोग और त्याग का अद्भुत समन्वय है। ऋग्वेद के समय से ही ज्ञान प्रणाली के विविध आयाम जीवन के नैतिक, भौतिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक मूल्यों पर केन्द्रित होकर विनम्रता, सत्यता, अनुशासन, आत्मनिर्भरता और सभी के लिए सम्मान जैसे मूल्यों पर जोर देती थी। वेदों में उपलब्ध विपुल ज्ञान राशि को मनुष्यता की श्रेष्ठता का आधार स्वीकार किया गया था। जीवन के सभी पक्ष इस प्रणाली में सम्मिलित थे। वेद, उपनिषद, वेदान्त, पुराण, रामायण, महाभारत, गीता आदि के सिद्धान्तों ने मानव प्राणियों एवं प्रकृति के मध्य सन्तुलन को बनाए रखना सिखाया। उतने ही प्रासंगिक हैं, जितना कि प्राचीन समय में। भारत को ज्ञान का सिरमौर बनने के लिए अपने 'स्वत्व' की ओर लौटना होगा।

आज का युवा प्राचीन भारतीय संस्कृति को पिछड़ा मानकर पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध में खोता जा रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि आज की पीढ़ी को दिग्भ्रमित होने से बचाया जाए। भारत की प्राचीन ज्ञान प्रणाली रूपी विरासत से आज के युवाओं को दिशा–बोध कराया जाए। यह महत्वपूर्ण कार्य शिक्षक एवं शिक्षण संस्थानों के माध्यम से किया जाना चाहिए।

मुख्य बिंदु

बसुधैव कुटुम्बकम्, सर्वेभवन्तु सुखिनः, स्वत्व, आध्यात्मिकता, पारलौकिकता।

प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय ज्ञान–विज्ञान की गौरवमयी परम्परा समस्त जगत को आलोकित करने वाली है। प्राचीन भारत की ज्ञान परम्परा के विविध पक्ष जो वर्तमान वैज्ञानिक जगत् के लिए कौतूहल का विषय हैं। आधुनिक विज्ञान हमें समुन्नत स्थिति में दिखाई दे रहा है, लेकिन वहीं दूसरी ओर इसके दोष एवं नकारात्मक प्रभाव भी दिखाई दे रहे हैं। विज्ञान की प्रगति है।

भारतीय सनातन दृष्टि निश्चित रूप से वैज्ञानिक, तार्किक और व्यावहारिक पक्षों की संतुलित और सुदीर्घकालीन एक ऐसी व्यवस्था थी, जिसने स्वयं के साथ दूसरे का विचार किया। आज हम स्वार्थ

में अंधे हैं और परमार्थ की झूठी बात करते हैं। हम सब की बात करते हैं लेकिन सब कुछ केवल खुद के लिए ही चाहते हैं। सच्चाई को खोजने के लिए निकलते हैं लेकिन सच्चाई से सामना होने पर उसे नजर–अन्दाज करते हैं। अपने को विज्ञान के युग का मानते हैं लेकिन विज्ञान को सही अर्थों में समझना नहीं चाहते हैं। दूसरे ग्रहों पर जीवन तलाशते हैं और अपने ही ग्रह पर जीवन को भूल जाते हैं।

भारत में सनातन संस्कृति का स्वभाव हजारों वर्षों से एक–सा है। यह जीवन–दृष्टि के कारणों से है क्योंकि भारतीय जन सबसे अधिक इस धरती को महत्व देता है। दुनिया की अन्य किसी संस्कृति में भूखण्ड को इतना अधिक मूल्यवान मानने की परम्परा नहीं रही है। यह भाव भारतीय सनातन संस्कृति का आधार है। हम सब अलग–अलग होते हुए भी जिस स्वभाव और मूल्य की वजह से एक सूत्र से बँधे हुए हैं, वही मूल्यों की धरोहर हमारे भारत की पूँजी है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक, तक्षशिला से लेकर कामरूप तक एक जन, एक राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित है।यह विशिष्टता भारत के अलावा दुनिया के किसी भी अन्य भौगोलिक क्षेत्र में प्राप्त होना कठिन है। आज कुछ लोग भारत के टुकड़े करने पर उतारु हैं। ऐसे उन्मादी लोगों को यह समझना चाहिए कि यह देश एकात्मकता और एक सूत्रता के बल पर टिका हुआ है। भारत की राष्ट्रीयता में एक नैसर्गिक दृष्टिकोण है जो समभाव, समदर्शी एवं समावेशी स्वभाव से सम्पृक्त है। भारत की इसी राष्ट्रीयता को श्री अरविन्द ने आध्यात्मिक राष्ट्रवाद तथा पं0 दीनदयाल ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के नाम से सम्बोधित किया है।

भारतीय संस्कृति की सर्वोच्च विशेषता उसका आध्यात्मिक होना है। किन्तु भारतीय संस्कृति ने कभी भी अधिमौतिक अथवा लौकिक उन्नति की अवहेलना नहीं की है। भारतीय संस्कृति में समस्त लौकिक एवं औद्योगिक कार्यों का सम्बन्ध आध्यात्मिक उन्नति से जोड़ दिया गया है। भारतीय सांस्कृतिक विचारधारा में सभी मनुष्यों की योग्यता, बुद्धि, सामर्थ्य के अनुसार कर्त्तव्य निश्चित किए गये हैं, विविध मनुष्यों के कर्त्तव्यों में भिन्नता होते हुए भी प्रेरणा में समता है, एक निष्ठा एवं एक उद्देश्य है और यही उद्देश्य अध्यात्म कहलाता है। आत्मानुभूति या आत्मसाक्षात्कार ही आध्यात्मिकता का केन्द्र बिन्दु है। यह व्यक्ति का मार्ग प्रदर्शक आधार है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण स्वयं को परिमार्जित एवं रूपान्तरित करने का आधार है। स्वानुभूति की स्थिति ही आत्मा में परमात्मा का दिग्दर्शन है। आध्यात्मिक उन्नति में व्यक्ति रहता वही है लेकिन उसके कार्य, व्यवहार, विचार आदि में परिवर्तन हो जाता है। उसके व्यवहार में स्थायित्व, सन्तुलन एवं स्थिरता आ जाती है। व्यक्ति स्वहित से परहित, स्वार्थ से परमार्थ, सहानुभूति से परानुभूति एवं व्यक्तिगत उत्थान से सर्वोत्थान के दृष्टिकोण से कार्य करता है। हजारों वर्षों से चली आ रही भारतीय संस्कृति में आध्यात्मिकता रूपी विचारधारा को ह्रदयंगम कर आधुनिक मनुष्य नैतिक एवं चारित्रिक उन्नयन कर मूल्यवादी समाज के नव–निर्मात में अपने कर्त्तव्यों को सही ढंग से अंजाम देकर उत्कृष्ट बन सकता है।

हमारी भारतीय सांस्कृतिक विचारधारा में समन्वयवादिता का गुण विद्यमान है। हमारी सांस्कृतिक विचारधारा की एक विशेषता यह रही है कि देश में विभिन्न प्रकार के धर्म, पंथ एवं विचार रहते हुए भी सब एक सूत्र में बंधे रहे। प्रतिकूल परिस्थितियों में भी सब कुछ सहन करने की अद्भुत शक्ति के कारण ही आज हमारी सांस्कृतिक विचारधारा अक्षुण्ण बनी हुई है। भारतीय संस्कृति का प्राचीन काल से ही उद्घोष रहा है– ''आत्मनः प्रतिकूलानि परेशां न समाचरेत'' अर्थात् जो बात, जो व्यवहार स्वयं अपने आपको न भाता हो, प्रतिकूल लगता हो, उस प्रकार का व्यवहार हमें दूसरों के

साथ नहीं करना चाहिए। भारतीय संस्कृति में वैदिक कालीन, बौद्धकालीन, जैनकालीन, एवं आधुनिक कालीन संस्कृतियों का योग है। इसमें सभी संस्कृतियों का आदर है तथा धर्म या जाति को समानता से सम्मान दिया जाता है। भारतीय संस्कृति ने अन्य सभी संस्कृतियों को अपनाया है इसलिए वह सभी के द्वारा पूजनीय है। उदारता, सहिष्णुता, अहिंसा, क्षमाशीलता एवं भारतीय संस्कृति वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को अंगीकार करती है। वसुधैव कुटुम्बकम् भारतीय जीवन दर्शन का सार वाक्य है। हर भारतीय इस पर गर्व करता है। 'सम्पूर्ण विश्व एक परिवार है' की भावना भारतीयता की पहचान को प्रतिबिम्बित करती है। भारतीय संस्कृति विश्वहित को सर्वोपरि मानती है। इसमें व्यक्ति का यह कर्त्तव्य बताया गया है कि वह व्यक्तिगत उत्थान के साथ–साथ सामाजिक एवं वैश्विक कल्याण का भाव भी अपने अन्दर रखें। भारतीय सद् ग्रन्थों में स्वात्थान की परिणति सर्वोत्थान के रूप में वर्णित की गई है। विश्व बन्धुत्व की भावना को प्रगाढ़ करने वाले इस सूत्र वाक्य के मूल तथा भारतीय दर्शन की गहराई को दुनिया ने समझ लिया है और इसे बढ़ावा देने की दिशा में कदम उठाए जा रहे हैं। इन प्रयासों ने वसुधैव कुटुम्बकम् को विश्व भर में तेजी से लोकप्रिय बनाने का काम किया है। इसका प्रभाव हाल ही में आयोजित हुए जी–20 सम्मेलन में देखने को मिला। जिसमें दुनिया भर के देशों के प्रतिनिधि भारत में आए और विश्व बन्धुत्व की भावना को और प्रगाढ़ करने की बात पर बल देते हुए भारतीयों की इस भावना को सम्मान करते दिखे जो पूरे विश्व को एक परिवार की तरह देखने की बात करता है।

भारतीय संस्कृति में सादा जीवन उच्च विचार एवं त्याग की भावना को स्वीकार किया गया है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक जो भी ऋषि, संत, गुरुजन, महात्मा एवं महापुरुष हुए हैं, उन सबने सादा जीवन उच्च विचार के आदर्श को आत्मसात किया है। वस्तुओं का अधिक संग्रह लोभ को जन्म देता है। हमें केवल अपने जीवनयापन हेतु ही चीजों का संग्रह करना चाहिए। इसकी मान्यता है कि व्यक्ति को लोभी और अपने तक ही सीमित न होकर संसार के सभी लोगों के हित संवर्धन की बात सोचनी चाहिए। व्यक्ति का जीवन लोक संग्रह से मुक्त होना चाहिए।

प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा में योग –

योग प्राचीन भारतीय ऋषि मुनियों, तत्ववेत्ताओं द्वारा प्रतिपादित अनमोल ज्ञान–विज्ञान से युक्त एक विशिष्ट पद्धति है। इसमें मनुष्य को समग्र उत्थान, विकास एवं उत्कर्ष के लिए अनेकानेक विधि, उपाय, प्रयोग सन्नियोजित हैं। जीवन की प्रसुप्त, अविज्ञात व अजाग्रत शक्तियों का जागरण कर व्यक्तित्व को परम शिखर तक पहुँचाने की अपूर्व क्षमता योग के विविध साधन–सामग्रियों में विद्यमान है। योग मानव जीवन के सभी पक्षों को स्थिर, एकाग्र एवं चेतनशील बनाकर मुक्ति की ओर अग्रसर करता है। योग एक जीवन पद्धति है, जीवन दर्शन है एवं जीवन जीने की एक सर्वश्रेष्ठ कला है। योग का इस्लाम, हिन्दू, जैन या ईसाई से कोई सम्बन्ध नहीं है। लेकिन चाहे जीसस, चाहे मोहम्मद, चाहे पतंजलि, चाहे बुद्ध, चाहे महावीर, कोई भी व्यक्ति जिसने सत्य का साक्षात्कार किया है, बिना योग से गुजरे हुए वहाँ तक नहीं पहुँचा है। योग के अतिरिक्त जीवन के परमसत् तक पहुँचने का कोई उपाय नहीं है। बहुत बार हम धर्म को योग से जोड़ देते हैं। धर्म में विश्वास का समावेश है। है। योग एक विज्ञान है, विश्वास नहीं। योग की अनुमति के लिए किसी तरह की श्रद्धा आवश्यक नहीं है। नास्तिक भी योग के प्रयोग में उसी तरह प्रवेश पा सकता है जैसे आस्तिक। योग में आस्तिक और नास्तिक के बीच कोई विभेद नहीं किया गया है। भारतीय संस्कृति में योग की अनेक परम्पराओं

का जिक्र मिलता है। परम्पराओं के अनुसरण में किसी प्रकार की बाध्यता नहीं है, सभी स्वतन्त्र हैं। किन्तु यह उसकी पात्रता, संस्कार और संकल्प पर निर्भर होता है। भारतीय योग विद्या की महानता इसलिए है कि यह प्रत्येक व्यक्ति के लिए उसके अनुरूप पृथक–पृथक साधना पद्धति का वर्णन करती हैं। उपलब्ध योग साहित्यों के अध्ययन, अनुशीलन के बाद विद्वानों ने योग की विभिन्न शाखाओं को तीन प्रमुख परम्पराओं के अन्दर समाहित किया है। यह सर्वप्रचलित मान्यता है कि सृष्टि के आदिकाल में तीन शक्तियाँ मौजूद थीं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव। तीनों शक्तियों के कार्य क्रमशः सृजन, लालन–पालन और संहार करना बताया जाता है। ऐसा माना जाता है कि इन तीनों शक्तियों से अलग–अलग तीन प्रमुख योग परम्पराओं का अविर्भाव हुआ। जिसका वर्णन निम्नवत् है–

ब्रह्मा जी को आदि पुरुष तथा राजपुरुष माना जाता है। इनसे उत्पन्न होने वाले योग को राजयोग की संज्ञा दी गई है। ब्रह्मा द्वारा उद्भूत राजयोग परम्परा को सुव्यवस्थित रूप देने के लिए ब्रह्मा जी के अवतार के रूप में आने वाले प्रवर्तक हैं– पतंजलि। पतंजलि ने राजयोग को व्यापकता प्रदान की। राजयोग की परम्परा के प्रतिष्ठापन तथा उन्नयन में पतंजलि द्वारा रचित प्रमुख ग्रन्थ 'पातंजल योग सूत्र' का प्रमुख योगदान है।

विष्णु को समग्र वेदों का आदि प्रतीक माना जाता है। वह वैदिक परम्परा के आदि प्रवर्तक भी हैं। इनसे उत्पन्न होने वाले योग को वैदिक योग के रूप में मान्यता प्राप्त है। विष्णु द्वारा उद्भूत वैदिक योग परम्परा को सुव्यवस्थित रूप देने के लिए विष्णु अवतार के रूप में आने वाले प्रवर्तक हैं– श्री कृष्ण। श्री कृष्ण ने श्रीमद्भगवतगीता के द्वारा वैदिक योग परम्परा को प्रतिष्ठापित किया तथा निरन्तरता प्रदान की।

योग की तृतीय परम्परा के आदि प्रणेता शिव को माना जाता है। योग के ग्रन्थों में उन्हें आदिनाथ तथा आदियोगी की प्रतिष्ठा दी जाती है। शिव से जिस योग की उत्पत्ति हुई उसे हठयोग के नाम से जाना जाता है। शिव द्वारा उद्भूत योग की परम्परा को समुन्नत योग की बहुत सारी शाखाओं का जिक्र मिलता हैं। कुछ प्रचलित योग की शाखाओं का वर्णन निम्नवत् है–

कर्मयोग– कर्मयोग उपनिषद में वर्णित प्रथम योग है। कर्म एक क्रिया है जिसे हम सचेतन या अचेतन रूप में करते हैं। कर्मयोग वास्तव में गतिशील ध्यान का योग है। बिना किसी अपेक्षा और प्रतिफल के सतत् सजगता के साथ किए गए हमारे दैनिक कार्यों का प्रदर्शन है। कर्मयोग पूरी जागरुकता और समर्पण के साथ बिना किसी तुलना के कर्म करना है। भगवद्गीता में वर्णित है– 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।'

भक्ति योग– भक्ति एक प्रकार की भावना है। जब योग भक्ति के साथ जुड़ जाता है, तब यह भक्ति योग बन जाता है। भावनाओं को एक सकारात्मक दिशा में प्रवाहित करना ही भक्ति योग है। इस मार्ग में भक्त आत्म–समर्पण से अपने अहंकार को मारता है। यह प्रेम का मार्ग अतंहीन धैर्य और सहनशीलता की माँग करता है, जैसा कि मीराबाई के जीवन में दिखा था। इस मार्ग में हमें अपने अन्दर प्रेम विकसित करना पड़ेगा। नकारात्मक भावनाएं जैसे–द्वेष, लालच, स्वार्थ, ईर्ष्या और आत्म–केन्द्रिता पर नियन्त्रण करके ही हम भक्ति योग के मार्ग पर ऊपर चढ़ सकते हैं।

ज्ञान योग– यह आध्यात्मिक ज्ञान व प्रज्ञा का मार्ग है। ज्ञान योग की साधना स्वाध्याय और ध्यान के मार्ग द्वारा सम्पन्न होती है। तत्व ज्ञान की प्राप्ति मानसिक व भावनात्मक विकास तथा उसकी शुद्धि से प्राप्त होती है। श्रवण, मनन, निदिध्यासन इसके प्रमुख साधन हैं। ज्ञान मार्ग को प्रायः वे ही लोग अपनाते हैं जिनकी बुद्धि तीक्ष्ण एवं प्रखर होती है।

हठ योग– हठ योग शारीरिक और मानसिक शुद्धि और सन्तुलन प्राप्त करने के रूप में वर्णित किया जाता है। हठ योग सबसे अधिक जाना जाने वाला मार्ग है। यह प्राण को शरीर में प्रवाहित करने, प्राण शक्ति तथा चित्तशक्ति के बीच सन्तुलन विकसित करने वाला योग है। हठ योग में शरीर और नाड़ियों की शुद्धि का उद्देश्य प्रमुख होता है।

राजयोग– राजयोग आत्म निरीक्षण का मार्ग है। इसमें व्यक्ति मन के विभिन्न क्षेत्रों को ढूँढ़ने का प्रयास करता है। पतंजलि का अष्टांग योग राजयोग के अन्तर्गत ही आता है। इसमें आठ चरण हैं– यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि। ये आठ चरण उत्तरोत्तर मानव के पंच कोषों को स्थिर करते हैं। योग का मानना है कि शरीर पाँच कोषों–अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञानमय कोष तथा आनन्दमय कोष से बना है।

प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा में तीर्थ–स्थल– तीर्थ–स्थलों का निर्माण और उनका विकास भारत की प्राचीनतम समृद्ध परम्पराओं में से एक है। भारतीय तीर्थ मूलतः आस्था, श्रद्धा, आदर्श एवं मूल्यों का संगम हैं। हमारे तीर्थ आस्थाओं के मेले हैं, जहाँ लाखों–करोड़ों श्रद्धालुओं तथा यात्रियों की आनुभूतिक परितृप्ति होती है। असंख्य तीर्थयात्री अपनी निजता व व्यक्तिनिष्ठता को खोकर जन–जन में एकाकार होते हुए असीम सुख का अनुभव करते हैं। तीर्थ स्थलों का यह बेहद महत्वपूर्ण और प्रबल सामाजिक पक्ष है जहाँ पर विभिन्न स्थानों तथा विभिन्न सामाजिक संरचनाओं से आने वाले यात्रिओं के परस्पर सम्मिलन से उनका हृदय विशाल बनता है। उदारता, स्नेहभाव तथा भाईचारा विकसित होता है।

भारत ऋषियों, योगियों, महापुरुषों, भगवद्वतारों तथा देवताओं द्वारा सेवित भूमि है। जहाँ–जहाँ कोई यात्री तीर्थ यात्रा पर जाता है वहाँ सर्वत्र एक ही संस्कृति विविध रूपों में प्रकट हुई दिखाई देती है। हमारे तीर्थ भारत की सांस्कृतिक एकता के प्रतीक हैं। कैलाश से कन्याकुमारी और कामाख्या से कच्छ तक सम्पूर्ण भारत भूमि एक तीर्थ ही दिखाई पड़ती है। यहाँ ऐसा कोई अभागा क्षेत्र नहीं मिलेगा जहाँ आस–पास कोई पुनीत नदी, पवित्र सरोवर तथा कोई ऐसी तीर्थ भूमि न हो जिसकी महिमा देश के सभी भागों में न गायी जाती हो। महाशक्ति के 51 शक्तिपीठ जो सारे भारत में बिखरे हुए हैं, एक ही महादेवी के अलग–अलग अंग हैं, जहाँ सब में एक ही मंत्र का देवी सूक्त का पाठ 'या देवी सर्वभूतेषुकृ .....' सुनाई पड़ता है। ये शक्ति पीठ भारत की एक ही संस्कृति को प्रमाणित करते हैं। भारत के चारों कोनों पर स्थित चार धाम श्री बद्रीनाथ (उत्तर), श्री द्वारिका (पश्चिम), जगन्नाथपुरी (पूर्व) तथा रामेश्वरम् (दक्षिण) भारत की सांस्कृतिक सीमा को दर्शाते हैं। जहाँ जाने पर यात्री को सहज ही भारत की सांस्कृतिक एकात्मकता का बोध हो जाता है। जगद्गुरु शंकराचार्य द्वारा भारत की अखण्डता के प्रतीक पीठ–ज्योतिष पीठ (उत्तर में), गोवर्धन पीठ (पूर्व में), शारदा पीठ (पश्चिम में), श्रृंगेरी पीठ (दक्षिण में) स्थित हैं। जहाँ ब्रह्म सूत्र वेदान्त का एक ही वाक्य (ब्रह्मसत्यं जगतमिथ्या) गूंजता सुनाई देता है, जो हमारी एकता को प्रमाणित कर रहा है। एक ही शिव सारे भारत में 12 स्थानों पर द्वादश ज्योतिर्लिंगों द्वारा शिव सूक्तों से ज्योति फैला रहा है जिसमें कहीं भी कोई भिन्नता नहीं दिखाई देती। एक ही लीला कथा इन सारे शैव तीर्थों में सुनाई देती है। अपनी संस्कृति के विविध रूपों को जानने और उनमें एक ही सांस्कृतिक विचारधारा की अनुभूति करने का एक मात्र साधन तीर्थ यात्रा है (सिन्हा, 2021)।

प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा में संत परम्परा –

राष्ट्र जीवन के विकास और हमारे सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्यों के सष्जन में देश के संतों की शीर्ष भूमिका रही है। भक्ति मार्ग के आदि प्रवर्तक नारद ऋषि से लेकर मध्य युग व आधुनिक काल

पर्यन्त संतों का राष्ट्र में सुशासन स्थापना से लेकर समतामूलक उच्च जीवन आदर्शों के संवर्द्धन में प्रभावी भूमिका रही है। देश में धर्मरक्षापूर्वक स्वाधीनता आन्दोलन, भक्तिमार्गी संतों का मध्यकाल में, अरबी–तुर्की आक्रमणों, औपनिवेशिक साम्राज्यवाद एवं मिशनरी मतान्तरणों के विरुद्ध एक दुर्भेध दीवार बनकर अनिर्वचनीय योगदान किया है। आधुनिक कृष्णावतार चैतन्य महाप्रभु बर्बर इस्लामिक हिंसा व मतान्तरण के काल में न केवल हिन्दू को संगठित रखा वरन् हिन्दुत्व समय–समय पर विधर्मी हुए हिन्दू समाज की घर वापसी भी की है। कृष्ण भक्ति में सराबोर होकर समाज में भी संगठित नवचेतना के अग्रदूत बन गए। वे एक ऐसे योद्धा सन्यासी थे कि भय उनके निकट आता ही नहीं था। वे बर्बर इस्लाम की चुनौती बनकर उभरे और हिन्दू समाज के अन्दर व्याप्त भय को विनष्ट कर हिन्दुओं को अभय महामंत्र दिया।

कुठाराघात करते रहे। कबीर की दृष्टि एक ऐसे समाज की स्थापना में विश्वास करती है, जो मानवीय गुणों से परिपूर्ण हो, जिसमें सभी धर्मों, मतों को बराबरी का अधिकार प्राप्त हो। संत रामानन्द उत्तर व दक्षिण के मध्य एक कड़ी के रूप में जाने जाते हैं। 'जाति–पाति पूछे न कोई हरि को भजे सो हरि का होई।' रामानन्द ने दलितों, अछूतों, महिलाओं को भी भक्ति के वितान में समान स्थान दिया। संत दादूदयाल का नाम संत परम्परा में नभ में चमकते तारे के समान है। दादूदयाल ने ईश्वर की भक्ति को मानवीय दृष्टि व समाज सेवा से जोड़कर, भक्ति का मार्ग सुगम बनाने का प्रयास किया। उन्होंने बहुत ही सरल भाषा में अपने विचारों को लोगों तक पहुँचाया। इनकी वाणी में इतना तेज था कि इनका सत्संग सुनकर अकबर ने गौ हत्या बंद करने का एलान कर दिया था। अन्य संतों की भाँति ही बल्लभाचार्य जी ने सेवा भावना पर जोर दिया। बल्लभाचार्य के अनुसार इस सृष्टि के तीन मूल तत्व हैं– ब्रह्मा, ब्रह्माण्ड और आत्मा। उनका दर्शन इन तीनों तत्वों के इर्द–गिर्द ही घूमता दिखाई पड़ता है।

मीराबाई का आगमन एक ऐसे समय में हुआ जब भारत में स्त्रियों की दशा में गिरावट प्रारम्भ हो गई थी। पति की मृत्यु के बाद उन्होंने कृष्ण भक्ति को अपनाया तथा पुरुष प्रधान समाज को चुनौती प्रस्तुत की। परिवार और समाज ने मीरा को जितना रोकना चाहा, मीरा ने निभींकता के साथ इसका सामना किया। मीरा का कष्ण के प्रति विशुद्ध प्रेम यह संदेश देता है कि अगर मनुष्य एक लक्ष्य के साथ आगे बढ़ता है तो वह अपना मनवांछित फल अवश्य प्राप्त करता है।

निष्कर्ष

भारत हमेशा से एक शान्तप्रिय देश रहा है। बसुधैव कुटुम्बकम के साथ सबको साथ लेकर चलने वाला देश है। भारतीय जीवन मूल्य तथा यहाँ की ज्ञान परम्परा ने विश्व के सभी लोगों का मार्गदर्शन किया है संस्कृति, दर्शन, योग, कला, साहित्य, चिकित्सा, शिक्षा, तीर्थ तथा यहाँ की संत परम्परा हमें गौरव का आभास कराते हैं समस्याओं का समाधान कहीं बाहर नहीं बल्कि ज्ञान परम्परा रूपी खजाने में छिपा हुआ है। कोरोना काल में भारत की प्राचीन चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद की उपयोगिता, महत्ता और सार्थकता को हम सभी ने महसूस किया। भारत की संत परम्परा ने समाज से असमानता, आडम्बर, पाखण्ड, भेदभाव तथा ऊँच–नीच को समाप्त करके एक समतामूलक समाज बनाने का अथक प्रयास किया। दुनिया के विद्वानों ने भारतीय धर्म, ज्ञान, अध्यात्म और दर्शन से बहुत कुछ हासिल कर अपने–अपने देशों को समृद्ध किया है। भारत के अनेक महापुरुषों ने भी भारत की अनवरत् ज्ञान परम्परा से बहुत कुछ सीखा व उसके ही प्रकाश में समयानुसार अपने बहुमूल्य विचार

समाज को दिए। भारतीय ज्ञान परम्परा में अद्भुत शक्ति है। इसका आज की और भावी पीढ़ी को ठीक ढंग से परिचय कराने की महती आवश्यकता है।

सन्दर्भ

1. कौशिक, शिवशरण : भारतीय तीर्थों का सामाजिक सांस्कृतिक अवदान, शैक्षिक मंथन, वर्ष 13, अंक 12, जुलाई–2021, पृ० सं०–27–29
2. गगनांचल, योग विशेषांक, भारतीय संस्कृति सम्बन्ध परिषद, नई दिल्ली, मई–जून 2015
3. जोशी, लालमणि : योग की उत्पत्ति और उसका प्रारम्भिक इतिहास, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।
4. तिवारी, रविन्द्रनाथ : भारतीय ज्ञान परम्परा और राष्ट्रीय शिक्षा नीति, मई 2021, https://www.rashtriyashiksha.com
5. द्विवेदी, संजय : योग ने भारतीय ज्ञान परम्परा को वैश्विक पटल पर स्थापित किया है, जून–2021, https://www.prabhasakshi.com
6. दीक्षित, हृदय नारायण : भारतीय ज्ञान परम्परा और विश्वकल्याण की प्रेरणा, अप्रैल, 2023, https://www.loktej.com/article
7. परिहार, सावित्री एवं चौहान प्रभा : प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा और इतिहास, आई0जे0ई0आर0ई0डी0, वर्ष–12, अंक 01, जनवरी–फरवरी 2024, पृ० सं०–123–126
8. प्रकाश, भगवती : संत परम्परा एवं आदर्श समतामूलक राष्ट्र जीवन, शैक्षिक मंथन, वर्ष–14, अंक–12, जुलाई 2022, पृ० सं०–28–29
9. भारत एक सांस्कृतिक विविधता में एकता, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली, नवम्बर–2022
10. मालवीय, राजीव (2013) : उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
11. योग सहायक (माड्यूल), राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, नोएडा।
12. योग (इकाई–1) जैन विश्व भारती संस्थान, मान्य विश्वविद्यालय, राजस्थान, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय।
13. लाल, सोहन : भारतीय संतों का जीवन व समाज दर्शन – एक विश्लेषण, शैक्षिक मंथन, वर्ष 14, अंक–12, जुलाई 2022, पृ० सं०–33–36
14. व्यास, सीताराम : भारत की संस्कृति और तीर्थ–स्थल, शैक्षिक मंथन, वर्ष–13, अंक–12, जुलाई–2021
15. सिन्हा, हिम्मत सिंह : भारत की सांस्कृतिक एकता के प्रतीक हमारे तीर्थ, शैक्षिक मंथन, वर्ष 13, अंक–12, जुलाई 2021, पृ० सं०–13–15